eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

अज्ञेय का सांस्कृतिक प्रदेश

[1]दिग्विजय कुमार राय
[1]एसोसिएट प्रोफेसर, बी0.एस.एन.वी पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, लखनऊ

Abstract

नयी कविता' और 'प्रयोगवाद' के प्रवर्तक माने जाने वाले सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' का साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी है। यही कारण है कि उनके आलोचकों ने उन्हें आधुनिक हिन्दी काव्य का 'मसीहा' माना है। अज्ञेय जी बड़े ही चिन्तनशील, अन्तर्मुखी, एकान्तप्रेमी, संवेदनशील, प्रकृति अनुरागी तथा विनीत विद्रोही स्वभाव के थे। उनके व्यक्तित्व में एक ख्यातिलब्ध साहित्यकार के रूप में उपन्यासकार, कहानीकार, आलोचक, निबन्धकार, पत्रकार आदि के विविध रूप समाहित हैं। देश–विदेश में सांस्कृतिक भ्रमण करने के कारण इन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। अपनी स्वाध्याय शक्ति और चिन्तनधर्मिता के द्वारा आपने साहित्य की विविध विधाओं में उल्लेखनीय एवं दिशा–निर्देशात्मक कार्य किए।

विषय संकेतः– अज्ञेय, साहित्यिक व्यक्तित्व कथा साहित्य एवं कहानीकार अज्ञेय।

Introduction

अज्ञेय जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को यदि एक सूत्र में अभिव्यक्त करना चाहें तो हम उन्हें 'विशिष्ट संस्कृति का शलाका–पुरुष' कह सकते हैं। उनके समग्र जीवन की साधना वास्तव में साहित्य की ही साधना है। अज्ञेय जी की सांस्कृतिक चेतना को हम तीन रूपों में बाँट सकते हैं– एक उनका चिन्तन धरातल, दूसरा उनका सृजन और तीसरा उनका जीवन! तीनों ही आयाम उनको सांस्कृतिक साधना के अत्यन्त गहरे आयाम हैं। अज्ञेय के 'सांस्कृतिक प्रदेय' को समझने के लिए उनके उक्त तीनों रूपों पर चर्चा करनी आवश्यक है। प्रथमतः 'चिन्तक रूप' को देखते हैं। अज्ञेय जी के शब्दों में उनको 'संस्कृति' का स्वरूप देखें– उनके ''संस्कृति मूलतः एक मूल्य–दृष्टि और उससे निर्दिष्ट होने वाले निर्माता प्रभावों का नाम है उन सभी निर्माता प्रभावों का, जो समाज को, व्यक्ति को, परिवार को, सबके आपसी सम्बन्धों को, श्रम और सम्पत्ति के विभाजन और उपयोग को निरूपित और निर्धारित करते हैं। संस्कृतियाँ लगातार बदलती है, क्योंकि मूल्य–दृष्टि भी लगातार बदलती हैय क्योंकि भौतिक परिस्थितियाँ भी लगातार बदलती है। संस्कृति केवल भौतिक परिस्थितियों का परिणाम नहीं है क्योंकि वह अनिवार्यतया भौतिक जगत, जीवन–जगत के साथ मानव जाति के सम्बन्ध पर आधारित है और वह सम्बन्ध ज्ञान के विकास और संवेदन के विस्तार के साथ–साथ बदलता है। 'संस्कृति' उन सम्बन्धों का निरूपण भी करती है, निर्धारण भी करती है, मूल्यांकन भी करती है और उन्हों सम्बन्धों को अभिव्यक्ति भी है, अर्थात् वह एक साथ उनका परिणाम भी है और आधार भी।'' इस कथन में ऊपर से अन्तर्विरोध झलकता है, परन्तु ऐसा नहीं है। यह गतिशील समाज का एक अनिवार्य पक्ष है।

अज्ञेय संस्कृति–चेतना पर विचार करते हुए आधुनिक युग के एक विशेष पक्ष पर विचार करना जरूरी समझते हैं। वह पक्ष है– संस्कृति और विज्ञान के सम्बन्ध का पक्ष आधुनिक युग को वैज्ञानिक

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

युग कहते हैं। सबसे पहली पहचान हो आधुनिकता की उसको वैज्ञानिकता से, वैज्ञानिक दृष्टि से की जाती है। परन्तु इस वैज्ञानिक दृष्टि को भी गहराई से समझने की है। ''विज्ञान को मूल्य निरपेक्ष कहा जाता है कि विज्ञान वस्तु सत्य से सम्बन्ध रखता है और विषयी निरपेक्ष है, इसीलिए मूल्य निरपेक्ष है, क्योंकि मूल्य तो मानव समाज की उपज है और निश्चय ही विषयी सापेक्ष्य है, परिवर्तनशील है। इसी तर्क के आधर पर वैज्ञानिक दृष्टि को मूल्य निरपेक्ष दृष्टि कहा जाता है। लेकिन आज विज्ञान ने जो संभावनाएँ अपने समक्ष अर्जित की हैं, उन्हीं से वह सहम गया है। आज विश्व को विज्ञान ने सम्पूर्ण विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया है। अतः आज वह मूल्य–निरपेक्ष होने की बात ही नहीं कर सकता। अज्ञेय जो ने स्पष्ट लिखा है– ''वास्तव में, यही कहना आज सही होगा कि सारे संसार में बढ़े वैज्ञानिक आज फिर एक नैतिक चुनौतों की देहरी पर खड़े हैं– नैतिक चुनौती अर्थात् मूल्यदृष्टि की चुनौती। यह मानना सही नहीं है कि मूल्य–दृष्टि केवल संस्कृति की देन होती है अथवा केवल विज्ञान की उपज होती. है, लेकिन, विज्ञान कभी मूल्य–निरपेक्ष नहीं हो सकता और संस्कृति भी कभी उन सत्यों के प्रति एकान्त उदासीन नहीं हो सकती, जिनका भौतिक जगत है। यद्यपि उनका प्रमुख आग्रह उन सत्यों के प्रति बना रहेगा, जो मानव के अभ्यन्तर जगत से उसकी कामना और आकांक्षा से, उसके सुख–दुःखों से, उनके सामाजिक परिवेश से, और परिवेश के बन्धनों से अपेक्षया मुक्त होने अथवा हरने को उसको सहज प्रवृत्ति से सम्बन्ध रखते हैं। विज्ञान सदा भाव–ग्रहों राग–बन्धनों से मुक्त होना चाहता है। संस्कृति मुख्यतया अपने को राग– बन्धनों से जोड़ती है। लेकिन यह भेद दोनों की समानान्तर यात्रा का हो निरूपण करता हैय विरोध लक्ष्यों का नहीं।''

अज्ञेय ने संस्कृति की अनेक परिभाषाओं का उल्लेख करते हुए कहा है चाहे संस्कृति की समग्रताबोधी परिभाषा हो, या सौन्दर्यवादी व्यक्ति चेतना केन्द्रित परिभाषा हो या समाज चेतना को महत्व देने बाली, आदर्शवादी हो या पथार्थवादी किसी भी परिभाषा से हम चलें हम मानव के समय कर्मों की ओर जाने को बाध्य हो जायेंगे अवश्य ही हर संस्कार का सम्बन्ध चेतना के संस्कार से भी है तो स्पष्ट है कि हमारे संवेदनों के क्षेत्र का जितना विस्तार होगा, हमारी संस्कृति भी उतनी ही सम्पन्नता, आपकतर और अधिक ग्रहणशाली होगी और इस प्रकार हमारी मूल्य–दृष्टि भी अपने क्षेत्र का विस्तार करने और अपने को विशइतर बनाने की और उन्मुख होगी और हमारा आनंद–बोध भी एक तरह व्यापकतर चेतना अपनाना सीखेगा,दूसरी तरफ अपने संवेगों को ज्यादा बारीकी से देखना होगा, महीन चलनी से छानना होगा।'' इस प्रकार, हम देखते हैं कि सांस्कृतिक चेतना का प्रश्न अज्ञेय की दृष्टि में उतना परिभाषा का प्रश्न नहीं है जितना मन और चित्त के संस्कार का प्रश्न है और इसीलिए एक सीमा तक आध्यात्मिकता का प्रश्न भी है। कहा जा सकता है कि बिना आध्यात्मिक हुए भी संस्कृति से सरोकार सम्भव है। हाँ, सम्भव तो है, परन्तु वह संस्कृति एक अधूरी संस्कृति होगी। 'संस्कृति' के एक विशिष्ट आयाम पर अज्ञेय अपने विचार रखते हैं। वे लिखते हैं– ''संस्कृति और सांस्कृतिक चेतना का नारी से और समाज में नारी के स्थान से, गहरा सम्बन्ध है। कथन के स्तर पर तो हम नारी को पूजा का बखान करते हैं, परन्तु आचरण में हर स्तर पर नारी का शोषण और अपमान करते हैं। दो पुरुष एक–दूसरे को क्रोध में गाली भी दें तो उस गाली में भी अपमानित और लांछित स्त्रियाँ ही होती हैं, यह विचित्र बात है कि पुरुष जब स्त्री से प्रेम करता है तो अपना सब कुछ समर्पित करने को उद्यत रहता है, परन्तु उसी स्त्री को निरन्तर लाजित और अपमानित करने में उसे कोई संकोच नहीं। किसी भी संस्कृति की अवधारणा में स्त्री के प्रति पुरुष के इस उत्पीड़न और अपमानजनक व्यवहार को स्थान नहीं दिया जा सकता।

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

निष्कर्ष देते हुए अज्ञेय का मत है, ''संस्कृति का अनिवार्य सम्बन्ध मूल्य दृष्टि से होता है और अगर हममें संस्कृति की चेतना है, अथवा जागती है तो उसका अर्थ केवल इतना नहीं है कि हम परम्परा से चले आये मूल्यों को पहचान लें और स्वीकार कर लें। चौतन्य केवल स्वीकार–भाव नहीं है। मूल्यदृष्टि की चेतना मूल्यों को अर्थवत्ता की अनवरत् खोज की प्रक्रिया है। अर्थवत्ता की यह खोज मूल्यों की प्रत्यभिज्ञा तक ही सीमित नहीं रह सकती, बल्कि उनका पुनर्मूल्यांकन और प्रमाणीकरण हो करतो चलती है और वैसा अपना अनिवार्य कर्तव्य मानती है। कोई भी चेतना सम्पन्न एक जिज्ञासु भाव अथवा प्रश्नाकुलता लिए रहती है। अज्ञेय जी ने भारतीय संस्कृति पर विश्वसंस्कृ ति के सन्दर्भ में विचार करते हुए भी अनेक बातें विचारार्थ कही हैं। ये कहते हैं– 'एक समर्थ और प्रबल गतिमान विदेशी सभ्यता से टकराहट से यह प्रश्न उठना स्वाभाविक था कि भारतीय संस्कृति क्या है, उसमें क्या मूल्यवान और स्पृहणीय है, किन मूल्यों में उसको सामर्थ्य निहित है और कौन–सी प्रवृत्तियाँ उसे वह बल और गतिशीलता दे सकती है जिसको उसे पश्चिमी संस्कृति का मुकाबला करने के लिए आवश्यकता होगी विश्व संस्कृति की बात को अज्ञेय सही परिप्रेक्ष्य में रखकर देखना चाहते हैं। ये कहते हैं, ''विश्व संस्कृति को आरती उतारकर मानो संस्कारों भारतीय होने के दायित्व से हम छुट्टी पा लेते हैं। आदर्श और यथार्थ के बीच भारतीय मानस हमेशा एक ही गहरी खाई रखता है। उसका आदर्श होती है– विश्वसंस्कृति, आदर्श होती है विश्व राजनीति और विश्व नागरिकता, उसका यथार्थ होता है आंचलिक और प्रादेशिक संस्कृति, यथार्थ है प्रादेशिक और माण्डलिक राजनीति जब तक इस यथार्थ और इस आदर्श इस चुनौती की महो पहचान और इसका सम्यक स्वीकार हममें नहीं है, तब तक हम एक आत्म प्रवचना के कुहासे में हो जाते रहेंगे।'

भारतीय संस्कृति पर विचार करते हुए वे लिखते हैं– '' भारत की संस्कृति तो है ही समन्वित संस्कृतिः पहले आयात या कहीं–कहीं आरोप, फिर मिश्रण, फिर बाह्य प्रभाव को आत्मसात् करके उसी से अन्तःप्रेरणा की प्राप्ति, फिर उसी का प्रतिभा प्रसूत, नया प्रस्फुटन बाहर के दाय से संस्कृ तियों का संवर्द्धन बराबर इस तरह होता रहता है, और हमारी सभी कलाएँ हो क्यों? धर्म, आचार, दर्शन, सभी इसी प्रकार संवर्द्धित और परिवर्तित होते रहे हैं। लेकिन संस्कृति के विकास के लिए मानसिक स्वातंर्त्य अनिवार्य हैः अलग सोचने को भिन्न प्रकार से प्रयोग करने, भूलकर के शिक्षा पाने, लीक छोड़कर भटकने, शोध करने, असहमत होने, अपने क्षेत्र को प्रसृत या संकुचित करने, गहराई या ऊँचाई देने वालने और न बोलने को स्वाधीनता के बिना सांस्कृतिक विकास नहीं है।'' स्वतंत्रता का आत्यन्तिक महत्त्व स्वीकार करते हुए अज्ञेय जी ने सारे संसार को सांस्कृतिक उपलब्धियों से अपने को समृद्ध करने पर भी उतना ही बल दिया है। अस्तु इसी चिन्तन श्रृंखला से जुड़े हुए अन्य स्थल पर अज्ञेय जी ने स्वयं लिखा है– ''परिवेश मेरे लिए देशकाल का सतत् परिवर्तनशील सम्बन्ध है बल्कि उस सम्बन्ध का भी वह रूप है जो मेरी चेतना को छूता है, क्योंकि निस्संदेह, ऐसा भी बहुत कुछ हो रहा होगा जो रहा है– जो मेरो चेतना से परे है, उसे मैं अपना परिवेश कहने का दम कैसे भरे जब जहाँ वह मेरी चेतना को चुगा, चाहे उसमें बढ़ते हुए के कारण, चाहे मेरी चेतना की ग्रहणशीलता के कारण, तब और वहाँ वह मेरा परिवेश हो जायेगा। नहीं तो मेरे विश्व ब्रह्माण्ड सौर मण्डल के आस–पास लाखों–करोड़ों और एस विश्व प्रह्माण्ड बिखरे पड़े हैं।

सारतः सांस्कृतिक चेतना के प्रश्ता पर अजय जी ने केवल अपने चिन्तनपरक लेखों में हो नहीं विचार किया है, अपितु उनका सृजन भी सांस्कृतिक चेतनाको अभिव्यंजनाओं से भरा पड़ा है। उनके

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

काव्य में ऐसी अनुभूतियों को विभक्त है। उनके में भी संस्कृति के प्राणवान तत्व यत्र–तत्र बिखरे पढ़े हैं। उनकी कविताओं से कुछ अंश इस दृष्टि से करना उचित होगा।'' रचना की ये पंक्तियाँ देखे–

ईश्वर एक बार का कल्पक
और सनातन क्रान्ता हैः
माँ एक बार की जननी
और आजीवन ममता हैः
पर उनकी कल्पना, कृपा और करुणा से
हममें यह क्षमता है
कि अपनी व्यथा और अपने संघर्ष में
अपने को अनुक्षण जनते चलें,
अपने संसार को अनुक्षण बदलते चलें,
अनुक्षण अपने को परिक्रान्त करते हुए
अपनी नयी नियति बनते चलें।''

अपनी व्यथा और अपने संघर्ष में अपने को अनुक्षण जानते चले जाना, अपने संसार को अनुक्षण बदलते चले जाना, अनुक्षण अपने को परिक्रान्त करते हुए अपनी नयी नियत बनते चले जाना, यहाँ तो संस्कृति करती है। संस्कृति को वहाँ सर्जनात्मक परिणति है। अज्ञेय अपने सृजन में जीवन भर यही करते रहे। सागर ने उन्हें यहाँ दृष्टि दी, वन के पने अन्धकार भरे सन्नाटे में उन्हें यही अनुभूति हुई। जीवन, प्रकृति सभी ने उनके भीतर एक सांस्कृतिक उत्मेष भरा और उसी सांस्कृतिक उन्मेष को वे अपनी रचनाओं के माध्यम से संवर्धितः करते रहे। अज्ञेय के सांस्कृतिक प्रदेय में मूल्य संवेदना सर्वाधिक महत्त्व रखती है क्योंकि यह संस्कृति का उत्स है। मूल्यों के प्रति चिन्तन से ही संस्कृति का विकास प्रारम्भ हो जाता है। संस्कृति का आधार मूल्य हैं, इसीलिए मूल्यों के संकट की चर्चा वास्तव में संस्कृति के संकट की चर्चा है। अज्ञेय जी ने संस्कृति के सम्बन्ध में व्यापक संकट की चर्चा की है। अज्ञेय प्रत्येक संस्कृति से प्रभावित होना चाहते हैं, किन्तु अपनी या गैर को संस्कृति का सर्वथा तो उन्हें अमान्य है, क्योंकि उनके काव्य में इसका स्पष्ट संकेत भी मिलता है–

''देश–देश को रंग–रंग की मिट्टी है
हर दिन का अपना–अपना है आलोक स्रोत।''

दूसरे, उन्होंने संस्कृति के लिए बाह्य प्रभावों से आन्दोलित होने को प्रश्रय दिया और उन्हें लताड़ा जो बाह्य प्रभाव के प्रति अपनी आँखें बन्द किये रहते हैं। अज्ञेय जी की दृष्टि में संस्कृति आदान–प्रदान और परस्पर संघात की अवस्था है। भारतीयों को अपनी संस्कृति के प्रति हीन भाव और विश्व की अन्य संस्कृतियों के व्यामोह से हमारी संस्कृति का क्षय हो रहा है, जिसका दुष्परिणाम आज हम चारों ओर व्यक्तिगत सम्बन्धों के विघटन, सामाजिक अव्यवस्था और अराजकता के रूप में देख रहे हैं।

अकारण नहीं कि राष्ट्रीय संस्कृति से पहले विश्व संस्कृति और 'नेशनल पावर' से पहले 'वर्ल्ड पावर' का राग अलापने से विघटनकारी राजनीति पैदा होती है। अज्ञेय की 'अहं राष्ट्रीय संगमनी नामक रचना में सबसे पहले राष्ट्र बनाने और राष्ट्रीय बनाने की बात कही गयी है–

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

''देस रे देस तेरे सिर पर कोल्हू।
इसका भार तू कैसे ढोयेगा
जिसे पेरेंगे जाट, बाम्हन, बनिया, तेली, खत्री
मौलवी, कायथ, मसोहों, जाटव, सरदार, भूमिहर, अहीर
और वे सारे घेरे के बार के बेचारे
जो नहीं पहचानते अपनी तकदीरः
तू किस–किस को रोगा?
कब बनेगा तू राष्ट्र
कब तू अपनी नियति को पकड़ पाकर
तकिया लगाकर सोयेगा?

अज्ञेय भारतीय संस्कृति के अनन्य भक्त तो हैं, किन्तु अन्धभक्त नहीं, अतः साम्प्रदायिक संकट के प्रति चिन्तन से ही नहीं, काव्य के माध्यम से भी सोते हुए राष्ट्र के कान में चेतावनी का तिनका घुमाते हैं, फिर भी 'वर्ल्ड पावर' के लोभ में हम पश्चिम को अनुकृति में दोष नहीं दीखता। यह हमारी संस्कृति के मकट का एक अंग है। 'जनपथ राजपथ' नामक कविता में कवि ने व्यायात्मक रूप से पाश्चात्य सभ्यता के द्रुत प्रभाव को और संकेत किया है–

''राष्ट्रीय राजमार्ग के बीचों–बीच बैठे पछाही म
जुगाली कर रही
तेज दौड़ना मोटर, लारियाँ
पास आते सकपका जाती है
भैंस की आँखों की स्थिर चितवन
मानों इंजनों की बोलती बन्द हो जाती है।
भैंस राष्ट्रीय पशु नहीं है।

अज्ञेय जी के अनुसार पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण उचित नहीं है। भारतीयों को सर्वप्रथम स्वयं को मजबूत भारतीय बनाना होगा। अपनी संस्कृति में ही पैठ बनानी होगी अपनी जमीन पर मजबूती से खड़े होकर ही दूसरों से हाथ मिलाया जा सकता है। यह उन्हें समझना होगा। 'युद्ध विराम' नामक रचना में अज्ञेय जी की भारतीय संस्कृति पर वर्ग और देश–प्रेम की भावना और देशद्रोहियों से सचेत रहने की चुनौती की अभिव्यंजना हुई है–

''नहीं, अभी कुछ नहीं बदला हैः
कुछ नहीं रुका है।
अब भी हमारी धरती पर
बैर की जलती पगडण्डियाँ दिख जाती हैं

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

अब भी हमारे आकाश पर
धुएँ की रेखाएँ अन्धी चुनौती लिख जाता है:
अभी कुछ नहीं चुका है।
देश के जन–जन का यह स्नेह और विश्वास
वहाँ हमें यह भी याद दिलाता है
कि हम इस पुण्य भू के
शिति सीमान्त के धीर दिलात है।
हम बतयों क्योंकि तुम बल हो:
तेज दो, जो तेजस् हो,
ओज दो, जो हो,
हमें ज्योति दो, देश वासियों,
क्षमा दो, सहिष्णुता दो, तप दो हमें कर्म–कौशल दो:
क्योंकि अभी कुछ नहीं बदला है।''''

अज्ञेय जो के लिए संस्कृति जीवन–मरण का प्रश्न है। संस्कृति उनके मूल्य चिन्तन का मंत्र है। अज्ञेय जी के लिए संस्कृति उन मूल्यों का आधार है, जिनके लिये प्राण दिए जा सकते हैं। अज्ञेय के लिए संस्कृति और मूल्य परस्पर अन्तः सम्बद्ध हैं। मूल्य की पहचान के लिए संस्कृति से और संस्कृति का स्वरूप मूल्य से गठित होता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि अज्ञेय ने अपनी रचनाओं में अपनी देश–विदेश की यात्राओं और व्यापक जीवनानुभव के द्वारा भारतीय संस्कृति का प्रबलतम सन्देश दिया है जिसकी आधारशिला जीवन–मूल्य हैं।

इस प्रकार की कुछ अन्य रचनाओं में उल्लेखनीय हैं– 'बाँगर और खादर': 'दफ्तर शाम'य 'कितनी नावों में कितनी बार'य 'हरा अन्धकार': 'ओ लहर': 'सागर में ऊब दूब': मस्थलः रातक्रम–2, पत्थर का घोड़ा, सूनी सी साँझ एक, अन्तः सलिला, रात और दिन, अचरज, दिवाकर के प्रति दीप अतीत की पुकार, अखण्ड ज्योति, मैं तुम्हारे ध्यान में है'– 'द्वितीय', 'ओ मेरे दिल': 'उड़चल हारिल', 'भोर का गजर': 'आशी': 'सागर के किनारे 'य 'शरणार्थी', 'सवेरे–सवेरे' 'सपने मेने भी देखे हैं', 'बन्धु है नदियाँ': 'जनवरी छब्बीस' 'इतिहास की हवा'य 'और लहर': 'जितना तुम्हारा सच है', 'ब्राह्म मुहूर्त': 'स्वस्ति वाचन'य 'हरा–भरा है देश': 'लोटे यात्री का वक्तव्य', 'सागर पर साँझ', 'बड़ी लम्बी राह': 'हिरोशिमा': 'रश्मि बाण' 'चक्रान्त शिला': 'बना दे चितेरेः 'असाध्यवीणा'य 'उधर'य 'प्रातः संकल्प': 'और निःसंग ममेतर'य 'सम्पराय', 'नाता–रिश्ता': 'युद्ध विराम'य 'पक्षधर'य 'अन्धकार में जागने वाले' 'हेमन्त का गोत' आजादी के बीस बरस': 'अहं राष्ट्र संगमनी जनानाम् 'देश को कहानी', 'दादी की जवानी'य गूंजे की आवाज' सागर मुद्राः खिसक गयी है धूप दोस्त 'घर की याद': 'विदेश में कमरे' 'सभी से मैंने विदा ले लीः 'सागर के किनारे 'नन्दा देवी'य 'हम जरूर जीतेंगे': 'देवासुर'य 'जड़ें' 'पर', 'छन्द' (सदानीरा भाग–1 व 2)।

सारतः अज्ञेय जो व्यापक सांस्कृतिक संचेतना के रचनाकार हैं जो 'वसुधैव कुटुम्बकम की भावना से आत–प्रांत हैं। उनकी रचनाएँ उनके विराद 'सांस्कृतिक प्रदेय की दो प्रबल साक्ष्य है। अजय के सांस्कृतिक प्रदेश का जानने के लिए सहृदय होने की जरूरत है। निस्संदेह, सांस्कृतिक क्षेत्र में अक्षय

eISSN 2583-6986

IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 12, Dec 2022

के प्रदेश को शब्दबद्ध करके नहीं समझा जा सकता है। उनका साहित्य भारतीय दर्शन, वाम एवं संस्कृति को अमूल्य धरोहर है।

सन्दर्भ–

- अज्ञेय 'संस्कृति की चेतना, केन्द्र और परिधि, पृ0 290
- डॉ0 राम कमल राय – अज्ञेय, सृजन की समग्रता, पृ० 119,
- अज्ञेय – संस्कृति की चेतना, केन्द्र और परिधि, पृ0 293
- वही, पृ0 294,
- वही, पृ0 296,
- वही, पृ० 308,
- वही, पृ0 309,
- अज्ञेय भारतीय संस्कृति और विश्व संस्कृति, केन्द्र और परिधि, पृ0 309–10,
- अज्ञेय–प्रतिष्ठाओं का मूल स्रोत, आत्मनेपद, पृ0 97,
- अज्ञेय–लेखक और परिवेश, आल–वाल, पृ० 17,
- अज्ञेय पक्षधर, सदानीरा – भाग 2, पृ0 168–69,